Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
Volume-13, Issue-3, December-2019
Impact Factor:4.081
www.researchguru.net

गोस्वामी तुलसीदास की नारी संकल्पना

डॉ. तेजनारायण ओझा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, अग्रसेन महाविद्यालय, दि.वि.

रश्मि पांडे
शोध छात्र

सार:

नारी अस्मिता का उभार नए विमर्श की महत्वपूर्ण विशेषता है जहाँ उसे समानता और भागीदारी के लिए विषमतामूलक दृष्टि का विरोध करना पड़ता है। आदिकाल से ही पितृसत्ता ने स्त्री को दोयम दर्जे में जीने के लिए विवश किया है। सामंती परिवेश में स्त्री को मात्र भोग्या और वस्तु के रूप में देखा गया। इतिहास में जर जोरू और जमीन की लड़ाई में स्त्री लगातार तिरस्कृत होती रही मगर शनैः शनैः नवीन चेतना का उदय हुआ, विशेषकर आधुनिककाल में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद विद्यासागर, सावित्रीबाई फुले ने स्त्री प्रस्थिति को बदलने का भरसक प्रयास किया। सवाल ये उठता है कि इस बदलावकारी चेतना के पीछे अतीत में कोई चिह्न मौजूद है या नहीं। भक्तिकाल साहित्य का स्वर्णकाल है, इसलिए इस काल के परीक्षण से इस सवाल का जवाब ढूंढा जा सकता है। इस संदर्भ में अधिकांशतः महाकवि तुलसीदास को उद्धृत करने की चेष्टा रही है। एक तरफ 'ताड़न के अधिकारी' पद्यांश को सामने रखा जाता है तो दूसरी तरफ 'पराधीन सपनेहु सुख नाही' पद्यांश को। आधुनिक चेतना के बरक्स पुरातन चेतना का आकलन करना आसान होता है पर तत्कालीन परिस्थिति और संदर्भों की सम्यक व्याख्या मुश्किल। इस निकष पर तुलसीदास को यदि रखें तो उनकी नारी संकल्पना अपने युग से आगे की सोच पर अवस्थित नजर आती है।

की वर्डस:

नवजागरण, प्रगतिशील चेतना, स्त्री पराधीनता, परंपरागत सोच, संदर्भ का महत्व।

परिचय:

मध्यकाल में नारी की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। आदिकालीन समाज ने नारी की जो छवि तैयार की थी, उसका प्रतिबिंब मध्यकाल में दिख रहा था। मध्यकाल ने भी स्त्री को वस्तु के रूप में देखा। भक्तिकाल को तमाम दृष्टियों से स्वर्ण काल कहा जाता है लेकिन वहां भी स्त्री अपनी परंपरागत छवि से उबर नहीं पाई। भक्तिकाल कई अर्थों में नवजागरण का काल था क्योंकि इस काल के कवियों ने प्रगतिशील चेतना को अपनी अभिव्यक्ति के केन्द्र में रखा। नारी संबंधी संकल्पना इन भक्त कवियों की दृष्टि में कुछ अलग तो थी लेकिन पितृसत्तात्मक दबाव और परंपरागत सोच से मुक्त नहीं थी।

भक्त कवियों ने अपनी- अपनी सामाजिक व्यवस्था, भक्ति की परंपरा और साधनात्मक तथा सांस्कृतिक संदर्भ के अनुसार अलग-अलग स्त्री-संबंधी संकल्पना प्रस्तुत किया है। कबीर गंभीर सांस्कृतिक चेतना के कवि होते हुए भी स्त्री के प्रति न्याय न कर पाए -

नारी कूंड नरक का, बिरला थामे बाग ।
कोई साधुजन ऊबरे, सब जग मुआ लाग ।। [1]

तो कबीर ने जिस नारी को नरक का कुंड कहा, तुलसी ने भी उसी सोच और संकल्पना के साथ स्त्री का चित्रण किया।

सहज अपावन नार, पति सेवत सुभगति लहै ।

जस गावत श्रुति चार, अजहूं तुलसी हरिहै पिये ।। [2]

इसमें तुलसी ने भी स्त्री को अवगुण की खान स्वीकार किया। कुल मिलाकर स्त्री के संदर्भ में भक्त कवियों की दृष्टि भी कोई बहुत अच्छी नहीं थी ।

स्त्री जहां माया, अविद्या और अध्यास का पर्याय मानी जाती हो वहीं तुलसी ने अपनी परंपरा से अलग हटते हुए

---

[1] मैनेजर पांडेय - भक्ति आंदोलन और सूर का काव्य , पृ.सं. 26,

[2] वही , पृ.सं. 26,

स्त्री पराधीनता की चिंता की । इसलिए तुलसी और कवियों की श्रेणी से थोड़े अलग दिखाई देते हैं -

कत विधि सृजी नारि जगमांही, पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं ।[3]

तुलसी ने स्त्री-पराधीनता की चर्चा करके अपने आप को मध्यकालीन बोध से अलग कर के आधुनिक बना लिया है ।

प्रबंध काव्य और महाकाव्य लेखन में संदर्भ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। बिना संदर्भ के कथा आगे नहीं बढ़ती इसलिए तुलसी को संदर्भों का कवि कहना चाहिए। तुलसी ने स्त्री संबंधी विचार संदर्भों के अनुसार ही दिया है, इसलिए उनमें विभिन्नता दिखाई देती है। बिना संदर्भ को ध्यान दिए यदि तुलसी के स्त्री संबंधी विचारों का मूल्यांकन किया जाएगा तो वह न्याय-संगत नहीं होगा।

यहां दो संदर्भों की चर्चा से तुलसी के विचारों को देखा जा सकता है। पहला संदर्भ समुद्र से रास्ता मांगने और समुद्र का अपनी व्यथा सुनाने से संबंधित है, जहां समुद्र शूद्र और स्त्री के प्रति अपना विचार प्रकट करता है। समुद्र राम के सामने हाथ जोड़कर -**'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी सकल ताड़ना के अधिकारी'** [4] की बात कहता है। इस संदर्भ में अधिकांश लोगों की व्याख्या यह है कि तुलसी का यह वक्तव्य स्त्री के विरोध में है । अधिकांश लोगों का यह विचार संदर्भ में ध्यान में न रखकर दिया गया है। यदि संदर्भ की बात की जाए तो यह वक्तव्य समुद्र के द्वारा दिया गया है जोकि एक खल-पात्र है। अतः अपने विवेक के अनुसार स्त्री को परिभाषित करता है। इसकी दूसरी व्याख्या यह है कि 'ताड़ना' शब्द का अर्थ होता है 'जानना'। इस संदर्भ में समुद्र कहता है कि यदि स्त्री को समझा नहीं गया तो वह अनुरूप कार्य करने के लिए बाध्य नहीं होगी। इसलिए तुलसी की निगाह में नारी की संकल्पना प्रेम दायित्व-बोध, पतिपरायणा आदि कई आयामों से संचालित दिखाई देता है। दूसरा संदर्भ मंदोदरी का है जहां वह रावण को सीता को वापस करने की सलाह देती हैं।

रामहि सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथा ।

सुत कहुं राज समर्पि बन जाइए भजिअ रघुनाथ ।। [5]

मंदोदरी जिस तरह से रावण का हित चाहती है वह उसे उत्कृष्ट विवेक वाली सिद्ध करता है। मंदोदरी के सामने रानी और पटरानी का सवाल नहीं था। सवाल था तो पति के हित का, पुत्र की सुरक्षा का और रावण की कैद में बन्द सीता की संवेदना का। इसलिए मंदोदरी समय की पहचान करते हुए अपने विवेक को प्रमाणित करती है। यही नहीं, मंदोदरी को सत्ता, समय और राजनीति की भी गहरी समझ है। वह रावण को समझाती है कि बैर किससे करें और किससे ना करें। वह कहती है -

नाथ बयरु कीजे ताही हों । बुधि बल सकिअ जीति जाहीं सों ।।

तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा । खलु खद्योत दिनकरहि जैसा ।। [6]

यहां मंदोदरी का विवेक उच्चतम पराकाष्ठा में दिखाई देता है।

तो कहना समीचीन होगा कि तुलसी ने मानस में जितनी भी नारी पात्रों का सृजन किया उनमें मंदोदरी सबसे विवेकवान है।

मंदोदरी को सत्ता का सुख नहीं चाहिए, उसे न्याय और सत्य की रक्षा चाहिए। इसलिए वह रावण की चौथेपन की दुहाई भी देती है और कहती है -

---

[3] वही, पृ.सं. 26,

[4] गोस्वामी तुलसीदास- रामचरितमानस, सुंदरकांड, पृ.सं. 751

[5] वही, पृ.सं. 761

[6] गोस्वामी तुलसीदास- रामचरितमानस, सुंदरकांड, पृ.सं. 760

संत कहंहि असि नीति दसानन । चौथेंपन जाइहि नृप कानन ।।

तासु भजनु कीजिअ तहं भर्ता । जो कर्ता पालक संहर्ता ।। [7]

वह संतों की दुहाई पर कहती है कि अब हमारी अवस्था सन्यास आश्रम की है । हे दशानन! संतों और मुनियों की बातों का ध्यान करते हुए सीता को वापस कर देना चाहिए। समय की विषमता की पहचान करने वाला और अन्याय के सामने न्याय को प्रस्तावित करने वाला विभीषण को छोड़कर लंका में मंदोदरी के सामने कोई दूसरा पात्र नहीं है।

निष्कर्ष:

तुलसी ने अपने समय की संकीर्णताओं से मुक्त रहकर नारी संकल्पना को ऐसी ऊंचाई पर पहुंचाया है जहां मध्यकाल का कोई भी कवि नहीं पंहुच पाता। तुलसी की नारी संबंधी संकल्पना में नारी का सौंदर्य और दैहिक स्वरूप महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण है तो उसकी तार्किकता, विवेक, संवेदनशीलता। इसलिए अपनी पूरी परंपरा में तुलसी नारी संबंधी विचारों के लिए प्रगतिशील कहे जाएंगे। कोई भी व्यक्ति अपने समय के दबाव से मुक्त नहीं रह पाता क्योंकि इसी दबाव से उसके मानस का निर्माण होता है । तुलसी इससे अछूते नहीं हैं, फिर भी समय की सीमा से मुक्त रहकर स्त्री चेतना के साथ न्याय किया है। यही तुलसी की उपादेयता है।

संदर्भ

1. मैनेजर पांडेय - भक्ति आंदोलन और सूर का काव्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

2. गोस्वामी तुलसीदास- रामचरितमानस, सुंदरकांड, गीता प्रेस, गोरखपुर

[7] वही, पृ.सं. 760